International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2017; Page No. 09-12

मृदुला गर्ग के उपन्यास कठगुलाब में नारी संवेदना

डॉ॰ सुमन सामोता

प्राध्यापिका, हिंदी विभाग, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय, मारौत, जिला झज्जर, हरियाणा, भारत।

सरांष

मेरे शोध पत्र का उद्देश्य मृदुला गर्ग के उपन्यास 'कठगुलाब' में नारी संवेदना को अभिव्यक्त करना है। मृदुला गर्ग बेहद संकोची व अन्तर्मुखी व्यक्तित्व की लेखिका है। उनका उपन्यास कठगुलाब नारी संवेदना की सशक्त औपन्यासिक कृति है, जहां नारी पर घटित अन्याय, अत्याचार एवं उसकी वेदना के साथ नर–नारी सम्बन्धों की जटिल बुनावट और उसके रेशे–रेशे को व्याख्यायित करने की छटपटाहट का प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है।

'कठगुलाब' का प्रतीकात्मक अर्थ है ''नारी की जिजीविषा।'' उन्होंने माा है कि स्त्रियाँ गुलाब नहीं हैं जो उग जाने पर अपने आप खिल भी जाता है वे कठगुलाब हैं जिन्हें थोड़ी–सी देखभाल के साथ खिलाना भी पड़ता है।

मूल शब्द : कठगुलाब, मृदुला गर्ग, नारी की जिजीविषा।

प्रस्तावना

बीज कितना ही पुष्ट सम्भावनापूर्ण और शक्ति सम्पन्न क्यों न हो, उसे सही समय पर अनुकूल हवा–पानी–मिट्टी का आच्छादन मिले तभी सही ढ़ंग से अंकुरित होता है, विकसित होता है और फूलता–फलता है। यही धारणा नारी के सन्दर्भ में सही लगती है। 'कठगुलाब' उपन्यास नारी–संवेदना की सशक्त औपन्यासिक कृति है, जहाँ नारी पर घटित अन्याय, अत्याचार एवं उसकी वेदना के साथ नर–नारी संबंधों की जटिल बुनावट और उसके रेशे–रेशे का व्याख्यायित करने की छटपटाहट का प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है। इसमें रचनाकार की चिन्तनपरक्ता और जीवन अनुभवों के परिपक्व बोध के कारण पाठक की मूलभूत संवेदना का उत्कर्ष संभव होता है। स्त्री–विमर्श के बंधे–बंधाये फार्मूले से हटकर नर–नारी की समग्रता में पहचान संभव हुई है। यह सही है कि यहाँ स्त्री की उत्कृष्टता और आग में तपकर कंचन की तरह निखरने की ओजस्विता को लेखिका ने अपनी नई दृष्टि से ओझल नहीं होने दिया है।

मृदुला गर्ग के लेखन का मूल विषय एक जीवंत मानवीय इकाई के रूप में स्त्री की स्वतन्त्र अस्मिता का निदर्शन रहा है। 'नारी संवेदना' के बारे में उनकी मान्यता है कि स्त्री मात्र शरीर नहीं है। इनका विद्रोह उस परम्परापोषित मान्यता से है जो स्त्री को मात्र जैविक प्राणी मानती है। वह मानती है कि स्त्रियाँ भी हरियाकर सदाबहार हो जाती हैं। यदि इन्हें भी अपने सहचर पुरुषों की संवेदना का तरल स्पर्श मिलता, यदि विश्वास, सद्भाव, आत्मीयता की तरल फुहार इनकी हृदयगत कोमलता को निरन्तर सींचा होता। स्त्रियाँ गुलाब नहीं जो उग आने पर अपने आप खिल भी जाता है। वे 'कठगुलाब' हैं जिन्हें थोड़ी–सी देखभाल के साथ खिलना पड़ता है। 'कठगुलाब' का प्रतीकात्मक अर्थ है– 'नारी की 'जिजीविषा'। कठफोड़वा जो विपरीत परिस्थितियों में भी अपनी निर्माण क्षमता, सृजनात्मक इच्छा एवं सामर्थ्य को संजोए रखता है और जीत भी प्राप्त करता है। लेखिका का मानना है कि स्त्रियों में अतिरिक्त सजगता, साहस, धीरज, आस्था एवं दृढ़ प्रतिज्ञा का होना आवश्यक है क्योंकि उसे सिर्फ अपनी ही रक्षा नहीं करनी है वरन अपनी संतृति को भी सुरक्षा प्रदान करनी है। उसे सिर्फ अपने सम्मान को सरक्षित नहीं रखना है वरन् भविष्यगत पीढ़ी को संस्कारित भी करना है। दूसरे के सम्मान की रक्षणीयता का दायित्व भी उस पर है। वह यह सब प्रकृति से ही सीखती है। स्वयं प्रकृति बनकर अपनी ही रचना को खाद में बदलकर अंकुरित होना है, अपने अंकुरण के लिए आगामी फसल हेतु बीज डालना है। जो स्त्री का धर्म और दायित्व है। 'कठगुलाब' की सभी स्त्रियाँ मानो कहती हैं ''मैं चिल्ला–चिल्लाकर कहती हूँ कि मैं एक बच्चा पालना चाहती हूँ। अपनी आँखों के सामने अपने पाले को आत्म–निर्भर बनते देखना चाहती हूँ। उसे आत्म–निर्भर बनाने में इन्वेस्ट करना चाहती हूँ। मैं पालना, पोषना, सहेजना, संवारना चाहती हूँ। मैं एक सर्जक होना चाहती हूँ।''[1] सृजनेच्छा यानी आत्माभिव्यक्ति और आत्म विस्तार की तमाम अकुलाहट के बावजूद वे माँ नहीं बन पा रही हैं। हर बार गर्भपात ठीक कठगुलाब की तरह। पुष्पित होने की सारी संभावनाओं को अपने भीतर समोकर काठ–सी सख्त बेजान होने की यन्त्रणा। सैंकड़ों कलियां लदी हैं जिन पर लेकिन फूल बनकर खिलने का दम एक में भी नहीं। कठगुलाब की झाड़ियों पर लदी हैं सारी महका रंग तथा सुन्दरता के खजाने को अपने भीतर छिपाए पानी के छींटे पाते ही एक–एक कर खिलती हैं। झनम–झुम। झनम झुम। काठ में उकेरे सदाबहार फूलों की तरह।

लेखिका का मानना है कि हार्दिकता और आस्था के अभाव में प्रेम का वास्तविक रूप पहचान में नहीं आता। स्मिता अपने जीवन में क्रूरता, कड़वाहट, मानसिक तनाव और घृणा के संत्रास को झेलती बाहर से कठगुलाब की भाँति कठोर और भूरी हो चुकी है। किन्तु उसके अन्दर से हार्दिकता और आस्था का स्रोत सूखा नहीं है। वह आंतरिकता के धरातल पर कोमल, सुकुमार और सदाबहार तथा सरस है। प्रकृति की भांति आघातों को सहन करती हुई धैर्य और साहस से आगे बढ़ती है। वह जानती है कि बंजर धरती पर तभी फसल पैदा हो सकती है, जब उसकी अनुर्वरता का दोष दूर हो और उसके कण–कण को तरलता से अभिसिंचित कर दिया जाए। स्नेहकांक्षिता धरती को आत्मीय संवाद के बिना अपना नहीं बनाया जा सकता। धरती सिर्फ इतना ही चाहती है और बदले में 'रत्नगर्भा' बनकर अनमोल खजाने लुटाती है। उसका यह रूप उत्पीड़न के प्रत्युत्तर में सृजन की निष्कंप आस्था को चरितार्थ करता है। मृदुला गर्ग का नारी जीवन के प्रति परिपक्व, संवेदनशील तथा संतुलित

[1] मृदुला गर्ग, कठगुलाब, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 104

दृष्टिकोण दिखाई पड़ता है। पुरुष के अमानवीय व्यवहार को स्त्री ने हमेशा छला है। वे प्रतिरोध को सुरक्षित रखती हैं पर उसे सृजनेच्छा में बदल देती हैं। स्मिता, मारियान, मनीषा आदि सभी पीड़ा के मार्ग पर चलकर अपना लक्ष्य पाना चाहती हैं। पीड़ा के बिना सृजन नहीं, दर्द बांटे बिना जिन्दगी से मुक्ति नहीं पाई जा सकती और बिना प्यार बांटे दर्द नहीं बंटता।' इसलिए स्मिता जब भी हिन्दुस्तान लौटती है तो प्रकृति की गोद में ढ़ेर सारे बच्चों का रेल–पेल करता जंगल उगाकर पीड़ की एक–एक टीस को प्यार में बदलकर प्रतिशोध को रचनात्मक दिशा देने की पीड़ा को उपन्यास में शब्दबद्ध कर रचनात्मक दिशा देती है। स्मिता ने जब मारियान से पूछा कि क्या तुम मर्द होना चाहती हो? तब उसने उत्तर दिया– ''कभी नहीं। मैं मर्द नहीं सर्जक बनना चाहती हूँ ताकि उन अक्षरों की दुनिया में मैं तुझे अपने खुद की कितनी कितनी औरतों को दुबारा जन्म देना चाहती हूँ। पीड़ा की एक कचोट को प्यार में बदल दूंगी। फिर झुनुन–झुन खिलेंगे गुलाब। फिर मैं अपनी पीड़ा शब्दों में नहीं बच्चों में बांटूंगी।''[2] उसके जीवन में परिवर्तन घटित होता है। वह रचनाकार बन जाती है। उसकी सृजनेच्छा सफल होती है। रचनात्मक सृजन और मातृत्व दोनों सृजन इच्छा ही तो हैं। अपनी संतान की ललक एक मूलभूत चाहत है। जिसके अभाव में जीवन निरर्थक है। विपिन को असीमा से यह संभव नहीं था क्योंकि उसकी उम्र मातृत्व के ऊपर की थी। अतः उसके जीवन में नीरजा का प्रवेश होता है, परन्तु सारे खुलेपन के बावजूद नीरजा मजूमदार में पितृत्व की तलाश करती है। वह नीरजा से कहती है– ''मेरा स्पर्म फ्रीज करवा कर रखवा लो जब सुविधा हो तब इस्तेमाल कर लेना।''[3] यह वही नीरजा है जिसके सम्बन्ध में विपिन मजूमदार जो चालीस वर्षीय सौम्य सुलझा हुआ दृष्टि सम्पन्न चिन्तनशील पुरुष है, कहता है– ''पर नीरजा मेरे लिए माध्यम या औरत नहीं एक मोहक व्यक्तित्व थी। अपनी अस्मिता, पैशन, आकर्षण, लावण्य सब खोकर उसका एक साफ सुथरी चिकनी निपुण मशीन बनते जाना नाकाबिले बर्दाशत था। महसूस होता कि उसके अवयव कलपुर्जों से ज्यादा कुछ नहीं हैं और उसका दिमाग उनका रखरखाव करने वाला यन्त्र है। जिसकी जानकारी देने वाली भाषा भर उसे आती है और कुछ नहीं।''[4] उपन्यास के आखिरी हिस्से में नीरजा में भी बदलाव होता है। वह अपनी बूढ़ी असहाय माँ नमिता को घर लाती है। इसे सुनकर विपिन मजूमदार कहता है– ''वाकई उसे खुशी हुई थी। यंत्र खुद अपना खंडन करे, इससे अधिक हर्ष की बात और क्या हो सकती है ––– हर साख पर हजार हजार कठगुलाब उग आएं।''[5]

संवेदना की इस स्थिति को लेखिका ने दर्जिन बीवी के द्वारा प्रेम की आंतरिक शक्ति में निहित वृहद मानवीय सरोकारों को जीवन राग की भांति हर सांस में घुला मिला लेने का संकल्प में दिखाया है। वह कुछ बोलती नहीं। कर्म द्वारा अपने विचारों को वास्तविकता में बदलती है यदि पति ने उसे स्वीकार किया तो वह धर्म, समाज या न्याय के पास जाकर सहानुभूति या दया का अनुग्रह स्वीकार करने की इच्छुक नहीं है। वह कहती है– ''जिसने मेरे आत्म सम्मान को चोट पहुंचाई उससे पैसा क्या लूँ।''[6] वह सिलाई मशीन को अपना साथी बनाकर अपना मिशन प्राप्त करती है। वह ऐसी नारी है जो कहती है– ''हम औरतें हैं और हमें माफ करना आता है।''[7] वह दूसरों के समर्थन और सहारे से जीवन जीा नहीं चाहती। वह जानती है कि क्षमा और मुक्ति आत्म–विस्तार के द्वार हैं।

कठगुलाब की स्त्रियों का आदर्श मानव मात्र से प्रेम है। वे प्रेम को गुनती और प्राप्त करती है। अपने लेखन में दुनिया भर की पीड़ा को स्वर देती और प्रेम फैलाती मारियन आश्चर्यचकित है कि ''क्या वाकई एक वक्त था, जब एक बच्चे के खातिर अपनी जिन्दगी के हजारों लाखों लमहे बेमानी बनाने पर आमादा थी।''[8] यही प्रेम का चरमोत्कर्ष, पराकाष्ठा और परम तत्व है। यह भारतीय समाज में ही संभव है। स्मिता के भीतर उसकी तबाही का इतिहास रचने वाले उसके जीजा के प्रति बदले की प्रतिहिंसा का भाव भर उठा है। वह संकल्प लेती है– ''बहुत जल्द मैं ठीक ऐसे ही उस नर पिशाच को, उसके किए की सजा दंगी। बचपन में माँ को दुर्गापाठ करते सुना था। शब्द–पद भूल चुके थे, पर लय–ताल मन में बैठी रह गई थी। उसी धुन में मैं हर रोज प्रतिहिंसा की माला जपती थी। उसके लिए ताकत और बल इकट्ठा करने की भावना ने ही मुझे अमेरिका जाकर समृद्ध होने की प्रेरणा दी थी। या यह भी पलायन का ही एक रूप था। कौन जाने?''[9]

बाद में स्मिता डॉ0 जारविस जो मनोचिकित्सक है से शादी करती है। वह अपनी अहं भावना की पूर्ति हेतु स्मिता से विवाह तो कर लेता है परन्तु अपनी रुचि के अनुकूल काफी न उपलब्ध होने पर मारपीट जैसे निकृष्ट धरातल पर उतर आता है। इस माध्यम से लेखिका ने इस ओर भी इशारा किया है कि पाश्चात्य समाज में मूल्यहीनता और मुखौटा संस्कृति किस कदर हावी है। जो लोग बात–बात पर प्यार करते हैं और बात–बात पर तलाक, जिनके यहाँ करीब–करीब हर बच्चे के दो–एक सौतेले या संरक्षक माँ–बाप होते हैं, जिन्हें अपने आजाद समाज और सेक्स के अमर्यादित आनन्द पर नाज है, वे यह भी मानते हैं कि माँ–बाप के सेक्स संबंधों का इतना दूरगामी प्रभाव पड़ सकता है। दरअसल, इन्हीं प्रभावों की शिनाख्त निरूपण और इलाज पर लाखों डालर खपत वाला यह साइक्याट्रिक उपयोग टिका हुआ है।''

लेखिका मृदुला गर्ग की चिन्ता है कि स्त्री और पुरुष कब तक अलग–अलग एक–दूसरे के विरोध में काम करते रहेंगे। सृष्टि का सृजन जब एक–दूसरे के बिना संभव नही ंतो परिवार और समाज में परम्परा और निषेध, स्वभाव संस्कार के नाम पर कब तक आरोप प्रत्यारोप चलता रहेगा। क्यों मनोज को मीना का साथ उस समय असहय हो जाता है जब वह ईमानदारी से अपने जीवन को रौंदने वाली शोषण गाथा और ग्रन्थि उसके सामने खोलने का प्रयास करती है और मनोज के प्रति पूर्ण रूपेण समर्पित होती है। मृदुला गर्ग विवाह सम्बन्ध को परिभाषित तो करती है परन्तु कर्मकाण्ड पर करारा व्यंग्य भी करती है। अपनी अंतिम स्थिति में विवाह नियति युद्ध स्थल बनकर रह जाती है या दुख पाने–देने का अजस्र स्रोत। वह वैवाहिक जीवन का आनन्द नहीं रस नहीं मात्र संभोग के प्रेम विहीन एवं नीरस जीवनचर्या का रूप है, जिसका निर्वाह गृहस्थी की गाड़ी खींचने के लिए करना नारी की नियति है। समर्पण और बलात्कार के अन्तर की मानसिकता का पता मनीषा को चलता है। आनंदातिरेक के उन आत्म विभोर दिखने वाले क्षणों में उनकी आत्मा अनाप्लावित ही रह जाती है। मनु और मनीष का जीवन विसंगतियों और विडम्बनाओं का गुजलक बन गया है। उन्हें अपने

[2] वही

[3] मृदुला गर्ग, कठगुलाब, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 105

[4] वही, पृ0 155

[5] वही, पृ0 165

[6] वही, पृ0 170

[7] वही, पृ0 135

[8] वही, पृ0 122

[9] मृदुला गर्ग, कठगुलाब, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 153

पतियों से प्यार उस समय प्राप्त होता है जब वे उन्हें प्यार करना बन्द कर चुकी होती है। नर्मदा भारतीय नारी के उस वृहत्तर समाज का प्रतिनिधित्व करती है, जो लगभग अशिक्षित है। इन श्रमजीवी नारियों में वार्धक्य का आगमन यौवन के साथ ही शुरू हो जाता है। भारतीय श्रमजीवी वर्ग में अनपढ़ होने के बावजूद सांस्कृतिक चेतना होती है। नर्मदा का परिवार के प्रति समर्तित प्रेम, असीमा की माँ दर्जिन बीबी आदि में भारतीय नारी के उत्स की तलाश की जा सकती है। जहाँ अभाव और अपमान के अनुभवों के बावजूद जिन्दगी की सार्थकता के बीज मौजूद हैं। नर्मदा जब बीस वर्ष बाद भारत वापस लौटती है। पति से विवाह विच्छेद उपरान्त, जीजा की मृत्यु के बाद भी उसके भीतर घृणा और बदले की आग बुझी नहीं है। फिर भी वह अपनी बहन के घर आती है। जहां उसकी भेंट उसकी बहन से होती है। उसकी बहन नमिता के बारे में जानकारी देती है कि पति की बीमारी की उपेक्षा करके किसी अन्य पुरुष के साथ नमिता कैसे एक स्वच्छंद आचरण में सांस लेती है। कैसे उच्च वर्गीय मानसिकता से ग्रसित अपने नौकरों आदि से घृणा रखती है। नर्मदा के सन्दर्भ में लेखिका लिखती है– ''बचपन बड़े लोगों का होता है। हम तो कमाऊ ही पैदा होते हैं। चलो जब तक माता की छाती में मुँह रहे समझ लो बचपन है।''[10]

नर्मदा का उदात्त रूप वहाँ खुलकर सामने आता है जहाँ वह नमिता के पति के सन्दर्भ में स्मिता को जानकारी देते हुए कहती है– ''साहब बेचारा क्या दिलासा देता उसकी तो बानी छिनी पड़ी थी। बस वह टक लगाए मुझे ताकता रहता था, अंखियाँ पनिया जावें थी। आँखों से आँसू निकल आते तो मैं धोती के पल्लू से पोंछ डाले थी। कभी मन में जाने क्या हूक–सी उठ आवे थी कि मैं उसे कहानी या लोरी गा सुनाने लगी थी जैसे वह नन्हा बालक हो। अरे क्या मरद, क्या औरत, बेबस, लाचार, परवस हो तो नन्हा बालक ही हुआ न। इस दुखी जीवन में बालक को छाती से लगाने में क्या शर्म और कैसी झिझक।''[11]

मृदुला गर्ग इसके विपरीत पश्चिमी देशों में जहाँ का आकर्षण हम भारतीय पुरुषों में अधिक है के सन्दर्भ में डॉ0 से कहलवाती है ''देखो उसने कहा था हम पुरानी संस्कृति के लोग बोलकर अपने को दूसरे पर खेलते नहीं बल्कि और गहरे छिपने का पुल बांधते हैं। कृतज्ञता ज्ञापित करने में खुद को मटिया–मेट कर देते हैं। मातम में धाड़ मारकर रोते हैं तो समझ लो हम झूठ बोल रहे हैं। हमारी भाषा खूब लच्छेदार होती है। उसका प्रयोग हम अपने चारों तरफ तिलस्म का तानाबाना बुनने के लिए करते हैं। उसे फाड़कर हम तक पहुँचना मुश्किल है। हमें सिर्फ चुप्पी के दौरान पाया जा सकता है। अमेरिकनों के पास दो–चार जुमले होते हैं, उन्हें हर स्थिति में दुहरा देते हैं। स्मिता जारविस के दाम्पत्य संबंध में मातृत्व धारण भी करती है किन्तु एक दुर्घटना से गर्भपात हो जाता है। इसमें स्मिता की दर्दनाक मानसिक पीड़ा का जो चित्र है, वह झकझोर कर रख देता है। वह हर स्त्री की मर्मांतक पीड़ा बन जाता है। आज सुखभोगीवादी प्रवृति जो अति समृद्धि की कोख से जन्म ले चुकी है वह पारिवारिक जीवन व दाम्पत्य संबंध में घुन लगने के सदृश्य है। बाद में अमेरिकन पद्धति से स्मिता डॉ0 जारविस से तलाक ले लेती है। पाश्चात्य संस्कृति में बच्चा कब पैदा हो, इसका अधिकार स्त्री नहीं रखती। देह पर से गुजरती भोगवादी सुख–संचयी–संस्कृति में उसकी सृजनेच्छा, चाहे भीतर से कितनी ही बलवती हो। मारियान पहले पति से दाम्पत्य में असफल होने के बाद विश्वास, समझदारी, सहयोग की अपेक्षा के साथ पुनर्विवाह करती है तो भी पुरुष का वही रूप उसकी समझ आता है। क्या नारी पुरुषों द्वारा प्रताड़ित और अपमानित होने, कष्ट झेलने, शोषण और अन्याय का शिकार बनने तथा तिल–तिल कर मिटने के लिए जन्मती है। सभी नारी पात्र स्मिता, मारियान, असीमा, नर्मदा आदि। सभी इसी तरह जीने के लिए अभिशप्त हैं। मारियान कहती है– ''मैं यह मानने को तैयार नहीं थी। ऐसा नहीं था कि मैंने कभी किसी मर्द के हाथों चोट नहीं खायी। पर तमाम मर्दों को एक खांचे में डालने के लिए तैयार नहीं थी।'' ऐसी ही स्थिति का पता सूजन के शब्दों से चलता है। उसका गुस्सा धैर्य और हथियार हमेशा दूसरे मर्दों के लिए इस्तेमाल होते आया था। अपने मर्द के सामने उसने हथियार उठाने की कोशिश तक नहीं की। बस अपने रोने का एक खास समय तय कर लिया और काम में हर्ज किए बिना आँसुओं के नमक में धरती की ताकत बिखेरने वाला ममत्व ढूंढ लिया।

पति पीड़िताओं की शरणस्थली 'रॉ' संस्था है, जहाँ स्मिता की भेंट मारियान से होती है और मैत्री का अंकुर निकलकर वृक्ष बनता है। मारियान कहती है– ''यही कि मर्द नाम का पाणी खुदगर्ज और जालिम होता है।'' नारी पात्रों में स्मिता के जीवन के आरंभिक बीस वर्ष भारत में व्यतीत हुए हैं जितने भारतीय संस्कार उसमें उभरे हैं। मारियान अमेरिकन संस्कृति में पली बढ़ी है। तीसरी नारी पात्र नर्मदा श्रमजीवी वर्ग की नारी है। यह निम्न मध्य वर्ग और मध्य वर्ग के बीच की है। ग्लोबल प्रभाव से भारतीय समाज के बीच नर–नारी सम्बन्धों में घटित परिवर्तन तथा उनके सांस्कृतिक ह्रास की ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए पात्र सृजित किए गए हैं। आंतरिक प्रवृति की चाहत में आगे बढ़कर विश्वास और स्नेह का संबल दोनों के लिए आवश्यक है। विकल्पों की तलाश के लिए अवसर ही क्यों छोड़ा जाए? पारस्परिकता के अभाव में स्त्री पुरुष एक–दूसरे से जुड़ नहीं सकते।

हमें पता है कि कठगुलाब में एक ओर कठगुलाब है तो दूसरी ओर उसको विनष्ट करने वाला कठफोड़वा भी है। स्मिता की तबाही और उसके भीतर कठफोड़वा का निर्माण करने वाले उसके जीजा ही हैं। भारतीय समाज में जीजा–साली के बीच पलने वाला मिथक कितना दुर्भाग्यपूर्ण दुर्दांत है। यहाँ अनुभव किया जा सकता है।

उपन्यास में गोधड़ वह गांव है जहाँ अपने को निःशेष भाव से समर्पित कर शक्ति और ऊर्जा प्राप्त होती है। दुःखों, कष्टों, पीड़ाओं और वेदनाओं की पराकाष्ठा द्वारा अर्जित शक्ति जिसमें बंजर धरती पर कठगुलाब उगाने की क्षमता प्राप्त होती है। मानों दर्द का हद से गुजर जाना दवा हो जाना है यहाँ चरितार्थ होता है। सभी नारी पात्रों स्मिता, असीमा, नर्मदा, नीरजा आदि का प्राप्त निष्कर्ष यही है। जीवन का बंधा बंधाया कोई निश्चित ढर्रा नहीं होता, जिसे आदर्श मान लिया जाय। यह सब परिस्थिति, कालवृति, सोच और सामर्थ्य के हवाले करना ही उचित है। सभी नारियां गोधड़ का मार्ग चुनती है क्योंकि पुरुषों से आत्मवंचना पाने के बाद अपमानित होकर यही उचित प्रतीत होता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार 'कठगुलाब' उपन्यास नारी संवेदना की समग्रता प्रस्तुत करता हुआ उसके करुणकामान् भविष्य की ओर संकेत करता है जो यदि संवेदनहीन बौद्धिक पेचीदगियों और प्रतिशोधात्मक प्रतिक्रियाओं में उलझ गया तो सिर्फ टूटकर बिखर जाएगा। उन्होंने उपन्यास में नारी के अस्तित्व की मौलिकता को गहरी संवेदना और अनुभूति की सघनता के परिप्रेक्ष्य में उद्घाटित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मृदुला गर्ग, कठगुलाब, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 104

[10] मृदुला गर्ग, कठगुलाब, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 135

[11] वही, पृ0 145

2. वही
3. मृदुला गर्ग, कठगुलाब, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 105
4. वही, पृ0 155
5. वही, पृ0 165
6. वही, पृ0 170
7. वही, पृ0 135
8. वही, पृ0 122
9. मृदुला गर्ग, कठगुलाब, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 153
10. मृदुला गर्ग, कठगुलाब, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 135
11. वही, पृ0 145